|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 4: ज्ञानकर्मसंन्यासयोग

1/4 (श्लोक 1-10), शनिवार, 28 अक्टूबर 2023

विवेचक: गीता विदूषी सौ वंदना जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/ICS4n60Fm7Q

ईश्वर का अनुसन्धान करते हुए कर्म करना

भगवान श्रीकृष्ण की प्रार्थना, दीप प्रज्वलन एवं सुन्दर विग्रह दर्शन के साथ आज के श्रीमद्भगवतद्गीता जी के चतुर्थ अध्याय के विवेचन सत्र का शुभारम्भ हुआ।

गुरु वन्दना, ज्ञानेश्वर महाराज के चरणों का आश्रय प्राप्त कर माँ सरस्वती, गीता माता, महर्षि वेदव्यास जी की वन्दना की गई। परम पूज्य स्वामी श्री गोविन्ददेव गिरि जी महाराज के चरणों में नमन किया गया। साथ ही सभी साधकों का अभिवादन किया गया।

पूर्व में हमने देखा कि भगवान ने कर्मयोग का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। कर्म के साथ ईश्वर का अनुसन्धान करना, ईश्वरार्पण बुद्धि के साथ कर्म करना, चाहे वह कितना भी कठिन, युद्ध जैसा कर्म हो, अगर वह दायित्व के रूप में प्राप्त होता है, तो वह भी परमात्मा स्वीकार कर लेते हैं और कर्म बन्धनों से मुक्त करते हैं। जो भी परिणाम आता है उसे प्रसाद समझकर ग्रहण करना यही कर्मयोग है। इस प्रकार अर्पण किए हुए कर्म को भगवान स्वीकार कर लेते हैं।

ज्ञानेश्वर महाराज की एक सुन्दर ओवी है:-

उचित कर्मे आपुली ।
तुवा करुनी मज अर्पावी।
चित्त वृत्ती विझासावी। आत्मरुपी।

कर्तृत्त्व, भोक्तृत्त्व का त्याग करते हुए आत्मस्वरूप मे लीन रहकर अपने कर्त्तव्य कर्म को करते रहना चाहिए। हम चार स्तरों पर जीते हैं। शरीर, मन, बुद्धि और इन्द्रिय, लेकिन पाँचवाँ जो महत्त्वपूर्ण स्तर हैआत्मा, उसे हम भूल जाते हैं और गीता जी हमें आत्मिक अनुसन्धान की ओर ले जाना चाहती है।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते इस प्रकार कहते है:-

जैसे आज शरद पूर्णिमा है और चन्द्रमा की अलौकिक आभा है तो किसी कमल पुष्प को उस आभा को प्राप्त करने के लिए

चन्द्रमा तक नहीं जाना होता है। जिस प्रकार चन्द्र विकासी कमल अपने स्थान पर स्थित होकर उस चन्द्रमा के रस को ग्रहण करता है, चन्द्रमा की आभा को प्राप्त करता है, उसी प्रकार, श्रीमद्भागवद्गीता के श्लोकों का चिन्तन करना, परमात्मा के उस दिव्य उपदेश को जीवन में धारण करने का प्रयास करना और उसके साथ परमात्मा का अनुसन्धान अपने स्थान पर रहकर ही करना चाहिए। हमारे जैसे सामान्य मनुष्य, जो गृहस्थाश्रम के कर्त्तव्यों का पालन करना चाहते हैं, उन्हें कहीं दूर हिमालय की कन्दराओं में जाने की आवश्यकता नहीं है।

कांआपुला ठावो न सांडिता।
आलिंगिजे चंद्रु प्रगटिता
हा अनुरागु भोगिता।
कुमुदिनी जाणे।

जैसे ही चन्द्र प्रकट होता है, यह कमलिनी अपनी जगह न छोड़ते हुए चन्द्रमा का आलिङ्गन करती है और उसकी आभा और उसका अनुराग प्राप्त कर दिव्यता और आनन्द को प्राप्त करती है। उसी प्रकार परमात्मा का अनुराग प्राप्त करना है तो अपने स्थान पर रहते हुए कर्म को कर्मयोग में परिणित करते हुए अपने कर्त्तव्य कर्म को करते रहना चाहिए।

ईश्वर का अनुसन्धान करने से परमात्मा हमारे साथ बस जाते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता हमें नित्य उस परमात्म शक्ति के साथ अनुसन्धान करने के लिए पाथेय प्रदान करती है और यह परमात्म शक्ति नित्य हमारे साथ बसते हुए हमारे जीवन को उन्नयन की ओर ले जाती है, परन्तु अर्जुन के चेहरे पर प्रश्न का भाव है।

युद्ध भूमि में कौरवों की ग्यारह अक्षौहिणी सेना के साथ युद्ध करते हुए, अनेक शस्त्रों का ध्यान करते हुए, अपने लक्ष्य की ओर एकाग्र होते हुए किस प्रकार निरन्तर परमात्मा का अनुसन्धान होगा? क्या यह सम्भव है?

नित्य कर्म करते हुए भगवान का स्मरण करना, उनका अनुसन्धान करना और कर्म को अर्पण करना? किस प्रकार सम्भव होगा? यह बहुत कठिन है।

जैसा कि प्रार्थना में गाते हैं:-

कर प्रणाम तेरे चरणों में
लगता हूँ अब तेरे काज।
पालन करने को आज्ञा तव
मैं नियुक्त होता हूँ आज।

परमात्मा का स्मरण करते हुए अपने नित्य कर्म में लग जाना यही श्रीमद्भगवद्गीता द्वारा परमात्मा का उपदेश है।

अर्जुन के प्रश्न वाचक भाव को जानकर भगवान स्वयं ही इसका विस्तार करना प्रारम्भ करते हैं।

4.1

श्रीभगवानुवाच
इमं(म्) विवस्वते योगं(म्), प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान्मनवे प्राह, मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्॥1॥

श्रीभगवान् बोले - मैंने इस अविनाशी योग (कर्मयोग) को सूर्य से कहा था। (फिर) सूर्य ने (अपने पुत्र) (वैवस्वत) मनु से कहा (और) मनु ने (अपने पुत्र) राजा इक्ष्वाकु से कहा।

विवेचन:- भगवान कहते हैं:- अर्जुन तुम्हें ऐसा लग रहा है कि यह कर्मयोग मैं तुम्हें पहली बार बता रहा हूँ। यह तुम्हारी भ्रान्ति है। ईश्वर को अर्पण करते हुए कर्म करना, परमात्मा का अनुसन्धान करना, यह कर्मयोग सनातन है।

इसे पूर्व में भी मैंने किसे सुनाया यह तुम्हें बतलाता हूँ। अत्यन्त प्रबल विचारधारा के रूप में कभी नष्ट न होने वाला यह योग पूर्व में सबसे पहले मैंने विवस्वान अर्थात् सूर्य को बताया। तत्पश्चात् सूर्य भगवान ने उनके पुत्र मनु को और मनु ने उनके पुत्र इक्ष्वाकु को बताया।

इस तरह यह प्रबल अव्यय योग एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में सङ्क्रमित होता रहा। सम्पूर्ण प्राणी मात्र के लिए यह दिव्य धारा बहती रही है। अर्जुन के प्रश्न वाचक भाव को देखकर भगवान ने स्वयं ही यह सब बताना प्रारम्भ कर दिया।

इस सम्बन्ध में नारद जी की एक कथा आती है:-

नारद जी भगवान विष्णु के अत्यन्त श्रेष्ठ भक्त हैं जिन्होंने भक्ति के प्रसार के लिए नारद भक्ति सूत्र प्रदान किए एवं भक्ति के प्रसार के लिए वे पूर्ण ब्रह्माण्ड में विचरण करते रहते हैं। नारद जी को लगा कि पूरे समय मैं 'नारायण-नारायण' नाम स्मरण करता रहता हूँ, इतना भक्ति का प्रचार प्रसार करता हूँ, तो मेरे जैसा श्रेष्ठ कोई भक्त नहीं होगा। एक बार नारद जी ने भगवान से कहा कि मैं आपके परम भक्त का नाम सुनना चाहता हूँ। नारद जी को लगा कि भगवान तो मेरा ही नाम लेंगे। भगवान ने कहा चलो मैं तुम्हें उसके दर्शन करवाता हूँ। भगवान ने नारद जी को मृत्यु लोक के एक किसान का दर्शन करवाया। वह किसान खेतों में कठिन कार्य कर रहा था, गाय का दूध दोहन कर रहा था, साथ ही बीच-बीच में गोविन्द-गोविन्द ऐसा भगवान का नाम स्मरण कर रहा था। नारद जी ने कहा, भगवान यह आपको श्रेष्ठ भक्त लगता है? यह तो सतत् आपका नाम भी नहीं ले पा रहा है। काम करते-करते बीच-बीच में आपका नाम ले रहा है। न ही भक्ति का प्रचार-प्रसार कर रहा है।

भगवान ने कहा मैं तुम्हें इसका उत्तर बाद में देता हूँ। पहले कुँए से एक गागर पूरी भरकर अपने सिर पर रखकर लेकर आओ और शर्त यह है कि पानी की एक बून्द भी छलकनी नहीं चाहिए। नारद जी ने आज्ञा का पालन किया और भगवान से कहा, देखिए मैं गागर भर कर ले आया। भगवान बोले यह तो बहुत अच्छी बात है, गागर लाते समय कितनी बार नारायण-नारायण का जाप किया? नारद जी ने कहा कि भगवान मेरा तो पूरा अनुसन्धान जल की ओर था। पानी की एक बून्द भी नहीं छलकने दी। तब भगवान ने हँसते हुए कहा कि अपना काम करते हुए भगवान का नाम जप करना, अनुसन्धान करना एक दिव्य योग है।

गुरुदेव कहते हैं कि मन द्वारा किया जाने वाला यह सर्वोच्च पुरुषार्थ है। यह सरल नहीं है। मन को एकाग्र चित्त रखते हुए परमात्मा को ध्यान में रखना बहुत कठिन है। नारद जी ने भी माना कि यह कर्मयोग कठिन है।

अर्जुन भी सोच रहे हैं कि युद्ध करते हुए भगवान का अनुसन्धान करना कैसे सम्भव है? यह तो पहले-पहल ही सुना है। भगवान तभी बता रहे हैं कि यह प्रबल विचारधारा सनातन है और युगों-युगो से निरन्तर प्रवाहित हो रही है। यह सर्वप्रथम मैंने सूर्य भगवान को बताया और वह निरन्तर यह कर्मयोग कर रहे हैं। सृष्टि को प्रकाशित करना उनका दायित्व है जिसे वह बिना रुके, बिना पक्षपात के निरन्तर करते आ रहे हैं। रात को हम तो सो जाते हैं परन्तु सूर्यदेव पृथ्वी के दूसरे हिस्से के देशों को प्रकाशित कर रहे होते हैं।

गुरुदेव तीन महत्त्वपूर्ण सूत्र बताते हैं:-

No vacation, no discrimination और तीसरा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण- **no expectation**.

सूर्य देव बिना पक्षपात के सबको प्रकाशित करते हैं।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

गाईची तृषा हरूं । कां व्याघ्रा विष होऊनि मारूं ।

ऐसें नेणेंचि गा करूं । तोय जैसें ॥ १४७ ॥

नदी का जल यह नहीं सोचता कि गाय आई है तो उसकी प्यास बुझानी है और शेर आया है तो उसे विष देना है। वह पक्षपात नहीं करता और दोनों की प्यास बुझाता है।

विवेचन कर्ता ने अपना अनुभव बताया। बिजली विभाग में कार्य करते हुए अगर कोई ट्रांसफार्मर की माँग लेकर उनके पास आया तो उन्होंने यह विचार नहीं किया कि यह मेरा सम्बन्धी है या मेरे धर्म का है। अगर बिजली उपलब्ध है तो सभी के लिए है। जाति, धर्म इस तरह का कोई भी भेदभाव नहीं होना चाहिए।

तीसरा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि हमें कोई अपेक्षा नहीं रखनी चाहिए। जैसे सूर्य भगवान सभी के लिए समान रूप से प्रकाशित होते हैं, चाहे कोई उन्हें अर्घ्य प्रदान करें अथवा न करें। हम तो अपनी कृतज्ञता दर्शाने के लिए अर्घ्य प्रदान करते हैं। वह अपेक्षा नहीं रखते हैं एवं आज भी विलक्षण योग '**कर्मयोग**' का अनुसरण कर रहे हैं। भगवान कहते हैं कि यह सनातन प्रबल विचारधारा बहते-बहते थोड़ी क्षीण हो गई, किन्तु वह पुन: प्रवाहित होने लगी।

4.2

एवं(म्) परम्पराप्राप्तम्, इमं(म्) राजर्षयो विदुः।
स कालेनेह महता, योगो नष्टः(फ्) परन्तप॥2॥

हे परंतप ! इस तरह परम्परा से प्राप्त इस कर्मयोग को राजर्षियों ने जाना (परन्तु) बहुत समय बीत जाने के कारण वह योग इस मनुष्य लोक में लुप्तप्राय हो गया।

विवेचन:- भगवान कहते हैं:- परन्तप अर्जुन, परम्परा से प्राप्त इस कर्मयोग को राजर्षियों ने जाना है। काल के विस्तीर्ण प्रभाव के कारण यह ज्ञान नष्ट हो गया। काल का प्रभाव हमने देखा। जैसे एक कल्प में चार युग हैं। सतयुग, त्रेतायुग, द्वापर युग और कलियुग।

कलियुग चार लाख बत्तीस हजार वर्षों का है, द्वापर युग आठ लाख चौसठ हजार वर्षों का है। इस तरह यह चतुर्युगी सैंतालीस लाख छियानवे हजार वर्षों की है। इस प्रकार हजार चतुर्युगी के होने पर ब्रह्मा जी का एक दिन और फिर से हजार चतुर्युगी के होने पर ब्रह्मा जी की एक रात होती है और ऐसे ब्रह्मा जी की आयु सौ वर्ष की है। इस तरह काल का कितना बड़ा विस्तार है।

इस तरह भगवान कह रहे हैं कि काल के विस्तार में यह ज्ञान विलुप्त हो गया। यहाँ पर भगवान दो बातें कहना चाहते हैं। मनुष्य स्वार्थ वश फल प्राप्ति की दौड़ में यह भूल गया कि मैं सृष्टि में आया हूँ तो परमात्मा के कार्य करने हेतु आया हूँ और मैं उस परमात्म-शक्ति के कारण ही कार्य कर रहा हूँ, तो मैं अपना कर्म परमात्मा को अर्पण करूँगा।

भगवान का रहे हैं कि यह राजर्षियों ने जाना। एक होते हैं राजर्षि और एक होते हैं ब्रह्मर्षि। ब्रह्मर्षि निवृत्ति प्रधान होते हैं। वह ज्ञान प्रधान होते हैं, परन्तु भगवान अर्जुन को राजर्षियों का उदाहरण देते हैं, जो कर्म प्रधान होते हैं और कर्म करते-करते भी परमात्मा का ध्यान और मनन करते हैं।

4.3

स एवायं(म्) मया तेऽद्य, योगः(फ्) प्रोक्तः(फ्) पुरातनः ।
भक्तोऽसि मे सखा चेति, रहस्यं(म्) ह्येतदुत्तमम्॥3॥

(तू) मेरा भक्त और (प्रिय) सखा है, इसलिये वही यह पुरातन योग आज मैंने तुझसे कहा है; क्योंकि यह बड़ा उत्तम रहस्य है।

विवेचन:- भगवान कहते हैं, अर्जुन तुम मेरे परम प्रिय सखा और भक्त हो इसलिए मैं तुम्हें यह पुरातन(सनातन) ज्ञान बता रहा

हूँ। भगवान ने नवें अध्याय में बताया कि मैं तुम्हें गुह्य परन्तु पवित्र ऐसी बातें बता रहा हूँ। गुह्य, रहस्यमयी किन्तु पवित्र बातें भगवान अपने सखा अर्जुन को बता रहे हैं।

अर्जुन और भगवान श्री कृष्ण में चार-पाँच वर्ष का ही अन्तर है। उन दोनों की मैत्री का जितना सुन्दर वर्णन ज्ञानेश्वर महाराज ने किया उतना कहीं और नहीं देखने मिलता है।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

तूं प्रेमाचा पुतळा।
भक्तीचा जिव्हाळा ।
मैत्रियेची चित्कळा। धनुर्धरा । सुमनु शुद्धमति।
अनिंदकु तू अनंत गति।
गौप्य तरी तुजं प्रति चावळिजे।

अर्जुन तुम तो प्रेम के पुतले हो, भक्ति करना कोई तुमसे सीखे। तुम्हें सखा रूप में प्राप्त करने के लिए मैंने अग्नि से वरदान माँगा है। अर्जुन जैसा मित्र मुझे हमेशा मिलता रहे, उसकी भक्ति प्राप्त होती रहे, ऐसा स्वयं भगवान माँग रहे हैं।

अर्जुन तुम सुन्दर मन वाले हो, बुद्धि तुम्हारी शुद्ध है, दुष्ट बुद्धि नहीं है, किसी की निन्दा नहीं करते हो और शरण में आना तो कोई तुमसे सीखे।

तुम्हें याद है जब तुम मेरी मदद माँगने आए थे, दुर्योधन तुमसे पहले आया और मेरे सिरहाने बैठ गया, परन्तु तुम शरणागति का भाव लेकर मेरे पग की ओर बैठे। मेरी आँख खुलते ही मेरी दृष्टि तुम्हारी ओर गई। मैंने तुमसे पूछा तो दुर्योधन बोला मैं भी आया हूँ। तब मैंने कहा कि मेरी दृष्टि पहले अर्जुन पर पड़ी है तो मैं पहले अर्जुन से पूछूँगा कि एक ओर मेरी नारायणी सेना जो शस्त्रों से सज्ज है, दूसरी ओर निःशस्त्र मैं।

दुर्योधन ने सोचा, अर्जुन अगर नारायणी सेना माँग लेगा तो क्या होगा? दुर्योधन ने कभी भगवान को नहीं माँगा होता। अर्जुन ने निःशस्त्र श्रीकृष्ण को माँगा। भगवान ने कहा मुझे माँग कर क्या करोगे अर्जुन? अर्जुन बोले मेरे रथ की लगाम आपके हाथ में रखना और मुझे मार्गदर्शन देते रहना।

श्रीकृष्ण और अर्जुन बराबरी के हैं। युधिष्ठिर और भीम को श्रीकृष्ण प्रणाम करते हैं, नकुल और सहदेव श्रीकृष्ण को प्रणाम करते हैं, परन्तु श्री कृष्ण और अर्जुन एक दूसरे को आलिङ्गन देते हैं। अर्जुन कहते हैं कि ऐसा कैसे हो सकता है? श्रीकृष्ण तो मेरे समवयस्क हैं। देवकी माता के पुत्र हैं, कारागृह में इनका जन्म हुआ है और माता से हमने उनकी लीलाएँ सुनी है। ऐसा कैसे हो सकता है कि सूर्य भगवान को इन्होंने यह ज्ञान बताया है?

4.4

अर्जुन उवाच
अपरं(म्) भवतो जन्म, परं(ञ्) जन्म विवस्वतः।
कथमेतद्विजानीयां(न्), त्वमादौ प्रोक्तवानिति॥4॥

अर्जुन बोले - आपका जन्म (तो) अभी का है (और) सूर्य का जन्म बहुत पुराना है; अतः आपने (ही) सृष्टि के आरम्भ में (सूर्य से) यह योग कहा था - यह बात (मैं) कैसे समझूँ?

विवेचन:- अर्जुन कहते हैं कि आपका जन्म तो अभी-अभी हुआ है। कारागृह में हुआ है, आप तो अर्वाचीन हैं, तो मैं यह कैसे मान लूँ कि आपने यह सारी बातें सूर्य भगवान को बताई हैं, सूर्य तो अत्यन्त प्राचीन हैं। मैं यह कैसे जानूँ कि यह पूर्व में आपने सूर्य भगवान को बताया होगा। सूर्य भगवान तो कल्प के आरम्भ से हैं। आप तो अभी मुझे सारथ्य प्रदान कर रहे हैं।

4.5

श्रीभगवानुवाच
बहूनि मे व्यतीतानि, जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं(म्) वेद सर्वाणि, न त्वं(म्) वेत्थ परन्तप॥5॥

श्रीभगवान् बोले -- हे परन्तप अर्जुन ! मेरे और तेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं। उन सबको मैं जानता हूँ, (पर) तू नहीं जानता।

विवेचन:- भगवान कहते हैं:- अरे अर्जुन पूर्व में मेरे और तुम्हारे अनेक जन्म हो चुके हैं। मैंने भी कई अवतार लिए हैं और तुम्हारे भी मनुष्य रूप में कई जन्म व्यतीत हो चुके हैं। इसके बारे में तुम्हें पता नहीं है, परन्तु मैं जानता हूँ। वेद का अर्थ होता है ज्ञान, मुझे सबका ज्ञान है।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं:-

मी जेणें जेणें अवसरें।
जें जें होऊनी अवतरें।
हें समस्त ही स्मरें। धनुर्धरा।।

भगवान कहते हैं, अरे! धनुर्धर, मैं जिस-जिस अवसर पर जो-जो अवतार लेकर आता हूँ उसका मुझे स्मरण होता है, परन्तु मनुष्य अपने पूर्व जन्म को भूल जाता है।

यह व्यवस्था ही ऐसी है, नहीं तो अगर यह स्मरण रहे कि पूर्व जन्म में यह माता थी, यह बन्धु थे तो बहुत गड़बड़ हो जाएगी। इस विस्मृति से हमें ऐसा लगता है कि यह हमारा नया जन्म है, पहला जन्म है। भगवान सब कुछ जानते हैं, इसलिए भगवद्गीता कहती है कि जो सब जानता है उसे जानो।

स्वामी विवेकानन्द जी कहते हैं कि जिन बातों को मैं बदल नहीं सकता तुम उन्हें मुझे स्वीकार करने की शक्ति दो और जिन बातों को मैं अपने जीवन में बदल सकता हूँ उन्हें बदलने का साहस प्रदान करो, साथ ही यह विवेक भी दो कि मैं दोनों का अन्तर समझ सकूँ।

यह दो महत्त्वपूर्ण बातें हैं, मैं अपने अन्दर क्या बदल सकता हूँ और क्या नहीं बदल सकता हूँ, यह विवेक जागृत होना परमात्मा का हमारे अन्दर प्रकाशित होने जैसा है।

गीता के दो मुख्य स्वर हैं, परमात्मा की निरपेक्ष भक्ति और विवेक की जागृति। क्या करना और क्या नहीं करना चाहिए, कब करना और कब नहीं करना चाहिए, सही समय पर सही निर्णय कैसे लेना चाहिए। यदि यह हम पाना चाहते हैं तो यह भगवद्गीता हमें सिखाती है।

4.6

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा, भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं(म्) स्वामधिष्ठाय, सम्भवाम्यात्ममायया॥6॥

(मैं) अजन्मा (और) अविनाशी-स्वरूप होते हुए भी (तथा) सम्पूर्ण प्राणियों का ईश्वर होते हुए भी अपनी प्रकृति को अधीन करके अपनी योगमाया से प्रकट होता हूँ।

विवेचन:- अब भगवान उत्तम रहस्य खोलने लगते हैं। परमात्मा अज है। भगवान कहते हैं मेरा जन्म नहीं होता और मैं अविनाशी हूँ। जिसका कभी ह्रास नहीं होता, जो कभी नष्ट नहीं होता उनका जन्म कैसे हो सकता है।

हम जानते हैं कि ऊर्जा को उत्पन्न नहीं किया जा सकता और न ही नष्ट किया जा सकता है, केवल उसका स्वरूप बदल जाता है। इस प्रकार अज और अविनाशी होते हुए भी मैं सारे भूत प्राणी मात्र का नियन्ता हूँ।

हम अट्ठारहवें अध्याय में देखते हैं-

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारुढानि मायया ॥

वे नियन्त्रक हैं, पूरी सृष्टि उसके नियम अनुसार चलती है।

जैसे अभी नासा ने एक पृथ्वी जैसे ग्रह को ढूँढा है जो दो दिन में सूर्य का चक्कर लगाता है, जब कि पृथ्वी को तीन सौ पैंसठ दिन लगते हैं।

यह सारे नियम सृष्टि के लिए हैं।

क्या धरा हमने बनाई या बुना हमने गगन।
क्या हमारी ही वजह से बह रहा सुरभित पवन।
या अगन के हम हैं स्वामी नियन्ता जल धार के।
या जगत के सूत्रधार नियामक संसार के।

यह सब हम नहीं करते। हम प्रकृति के अधीन हैं और भगवान कहते हैं कि प्रकृति को अपने अधीन करते हुए अपनी योग माया के द्वारा मैं प्रकट होता हूँ। भगवान अवतार लेते हैं अर्थात अप्रकट परमात्मा का प्रकट स्वरूप में आना।

मनुष्य के जन्म लेने में और भगवान के अवतार लेने में बहुत अन्तर है। हम मनुष्य जन्म लेने के लिए विवश हैं ,बाध्य हैं। भगवान बाध्य नहीं हैं, वह नियन्ता हैं। भगवान इस त्रिगुणात्मक प्रकृति के अधिष्ठाता हैं, प्रकृति भगवान के अधीन है और हम प्रकृति के अधीन हैं।

भगवान तो केवल प्रेम के बन्धन में बँधते हैं, अपनी लीला दिखाते हैं। जब गोपिकाएँ यशोदा माता के पास श्रीकृष्ण का उलाहना लेकर आती हैं और यशोदा माता लकड़ी लेकर उनको बाँधने के लिए भागती हैं, तब भगवान कहते हैं, छड़ी छोड़ दो। भगवान आगे दौड़ते हैं माता पीछे। भगवान बार-बार लकड़ी छोड़ने की बात करते हैं। जैसे ही माता छड़ी छोड़ देती हैं, वैसे ही भगवान दोनों बाजू उनके गले में डालकर बँध जाते हैं।

भगवान कहते हैं मुझे यह प्रकृति के गुण नहीं बाँधते, मैं तो केवल प्रेम के बन्धन में बँधता हूँ।

4.7

यदा यदा हि धर्मस्य, ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य, तदात्मानं(म्) सृजाम्यहम्॥7॥

हे भरतवंशी अर्जुन! जब-जब धर्म की हानि (और) अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब ही मैं अपने आपको (साकार रूप से) प्रकट करता हूँ।

विवेचन:- भगवान यहाँ पर अपने अवतार लेने का कारण बताते हैं। अर्जुन को यहाँ पर भारत कहकर सम्बोधित करते हैं। **भा** यानि **आभा**। **भारत** यानी ज्ञान में रमने वाला। अनेक ऋषियों-मुनियों का यह देश रहा है जिन्होंने अपनी प्रज्ञा के माध्यम से अनेक तरङ्गों को ग्रहण करते हुए अनेक ग्रन्थों का निर्माण किया।

भगवान बताते हैं कि किस परिस्थिति में वे इन्द्रिय गोचर होते हैं, अर्थात हमारी इन्द्रियों द्वारा जिन्हें हम समझ सकें ऐसा रूप धारण करते हैं।

जब-जब धर्म का विनाश होता है और अधर्म की वृद्धि होती है तब मैं अपने इन्द्रिय गोचर रूप में प्रकट होता हूँ।

भगवद्गीता के सन्दर्भ में हमें इसे समझना चाहिए। हमें क्या करना है उसे कर्त्तव्य कहते हैं और हमें कहाँ जाना है उसे गन्तव्य कहते हैं। जो अपना स्वयं का धर्म है उसे करते रहना चाहिए। जिससे स्वयं का भी उत्थान होगा और दूसरों के जीवन का भी उन्नयन होगा। धर्म की आड़ में निरपराध लोगों की हत्या करना, यह धर्म की हानि है।

तब मैं अपने स्वयं की रचना करता हूँ। जैसे रावण भी बहुत यज्ञ कर्मकाण्डी था, परन्तु ऐसे लोगों को धार्मिक नहीं कह सकते।

शिवाजी महाराज के समय राजा जयसिंह थे जो एकलिङ्ग जी के उपासक थे परन्तु उन्होंने औरगंजेब का साथ दिया। ऐसे ही रावण, कुम्भकर्ण बहुत कर्मकाण्डी थे, देवताओं को सन्तुष्ट कर वर प्राप्त करते थे, परन्तु ऐसे लोगों को धार्मिक नहीं कहा जा सकता।

4.8

परित्राणाय साधूनां(म्), विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय, सम्भवामि युगे युगे॥8॥

साधुओं (भक्तों) की रक्षा करने के लिये, पाप कर्म करने वालों का विनाश करने के लिये और धर्म की भली भाँति स्थापना करने के लिये (मैं) युग-युग में प्रकट हुआ करता हूँ।

विवेचन:- भगवान बताते हैं कि वह किस लिए आते हैं-

सज्जनों का उद्धार करने के लिए और दुर्जनों के विनाश के लिए एवं धर्म की संस्थापना के लिए भगवान आते हैं।

अभी कलियुग में परमात्मा कैसे आएँगे इसके बारे में एक वचन है-

सङ्गठित सज्जनों की शक्ति यही परमात्मा है। सज्जनों के अन्दर परमात्म शक्ति का जागरण यही परमात्मा का अवतरण है।

धर्म उसे भी कहते हैं जिससे प्रजा की धारणा होती है, प्रजा का पोषण होता है। जिससे अभ्युदय भी होगा, भौतिक प्रगति भी होगी और सभी का परम कल्याण होगा, उसे धर्म कहते हैं।

अभी जिस प्रकार राम मन्दिर बन रहा है और हम सब प्रतीक्षा कर रहे हैं, हम सभी चाहते हैं कि राम राज्य स्थापित हो। ऐसा सभी सज्जनों के मन में आता है।

भगवान राम ने अवतार लिया, मन्थरा के कारण वन में जाना पड़ा, परन्तु भगवान ने धनुष बाण का त्याग नहीं किया। सीता माता ने पूछा कि आपने सुन्दर वस्त्र आभूषण सबका त्याग कर दिया परन्तु धनुष्य बाण का त्याग नहीं किया। जब वे आगे वन में बढ़े तब अस्थियों का ढेर लगा हुआ देखकर जानकी माता ने पूछा तब भगवान राम ने बताया कि यह सब ऋषि मुनि यज्ञ कर रहे थे और राक्षसों ने उन्हे यहाँ मारा। क्षत्रियों का धर्म है सज्जनों की रक्षा करना। अत: उन्हें कभी भी अपने शस्त्रों का त्याग नहीं करना चाहिए। सज्जनों की रक्षा के लिए सदैव तत्पर पर रहना चाहिए।

जैसे हमें कभी-कभी अपनी रसोई की, अपने घर की, अपने ऑफिस की व्यवस्था बदलनी पड़ती है, उसी प्रकार भगवान कहते हैं कि मुझे अपनी सृष्टि की व्यवस्था के लिए कभी-कभी अवतार लेना पड़ता है।

हनुमान जी के पूछने पर भगवान ने कहा कि मैं सज्जनों की रक्षा के लिए आता हूँ, हनुमान जी बोले आप एक और कारण से आते हैं। आप अपने भक्तों के लिए आते हैं, अपने कर्त्तव्य का किस तरह पालन करना, यह बतलाने के लिए आप आते हैं। पिता का धर्म, पुत्र का धर्म, यह सब कर्त्तव्य किस तरह निभाना चाहिए, यह बताने के लिए आते हैं। मित्र के साथ, शत्रु के साथ किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए, यह बताने के लिए भगवान आते हैं।

रावण की मृत्यु के बाद जब विभीषण ने अन्तिम संस्कार करने से मना कर दिया तब भगवान राम ने विभीषण से कहा, इसे मेरा भाई समझ कर इसका अन्तिम संस्कार करना। मृत्यु होने के बाद वह शत्रु नहीं रह गया।
गुरुदेव ने एक बहुत अच्छी बात कही है। किस प्रकार अपने धर्म को अपने अन्दर प्रतिस्थापित करने के लिए मनुष्य को भगवान को पुकारना चाहिए।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

मी अविवेकाची काजळी।
फेडूनी विवेकदीप उजळीं।
तें योगीया पाहे दिवाळी।
निरंतर।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि अगर विवेक-बुद्धि पर कालिख आ गई तो भगवान को पुकारने पर विवेक-बुद्धि जागृत हो सकती है।

गुरुदेव कहते हैं कि चालीस प्रतिशत हमारा समय सद्‌गुणों को अपने अन्दर उतारने के लिए व्यतीत होना चाहिए। छब्बीस दैवी सम्पत्ति हमने देखी है। धीरे-धीरे उन्हें अपने जीवन में सङ्क्रमित करना, उसमें हमारा समय व्यतीत होना चाहिए। तीस प्रतिशत आज के कर्त्तव्य कर्म के लिए, बीस प्रतिशत कर्मकाण्ड के लिए समय देना चाहिए। दिनभर कर्मकाण्ड करना यह धर्म नही है। हमारे कुल की, अन्य परम्पराओं के लिए हमारा समय दस प्रतिशत होना चाहिए। पूरा दिन अगर हम कर्मकाण्ड और परम्पराओं में व्यतीत कर देंगे तो हमारे जीवन का उन्नयन नहीं होगा। इस प्रकार समय का संयोजन करते हुए अपने स्वयं के धर्म की संस्थापना करनी चाहिए।

4.9

जन्म कर्म च मे दिव्यम्, एवं(म्) यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहं(म्) पुनर्जन्म, नैति मामेति सोऽर्जुन॥9॥

हे अर्जुन ! मेरे जन्म और कर्म दिव्य हैं। इस प्रकार (मेरे जन्म और कर्म को) जो मनुष्य तत्त्व से जान लेता अर्थात् दृढ़तापूर्वक मान लेता है, वह शरीर का त्याग करके पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होता, (प्रत्युत) मुझे प्राप्त होता है।

विवेचन:- दुर्जनों के नाश के लिए तो भगवान किसी को भी भेज सकते हैं, परन्तु अपने भक्तों के लिए उन्हें स्वयं आना होता है।

जब शबरी के गुरुदेव ने कहा कि भगवान राम आएँगे तब शबरी ने माना कि वह अवश्य आएँगे और प्रतिदिन पूजा की थाली सजा के रखती थी, भगवान के लिए सारे रास्तों की सफाई करती थी, फल एकत्रित करती थी और जब भगवान आए तब वह शबरी के जीवन का अन्तिम दिन था।

हनुमान जी ने कहा भगवान आप अपने ऐसे भक्तों के लिए आते हैं। जब भगवान अवतार लेते हैं तो जैसे धनुर्धारी राम, बंसीधरी कृष्ण हर एक के मन में समा जाते हैं।

भगवान कहते हैं, अर्जुन मेरा जन्म दिव्य है, इसे जो तत्त्व से जान लेता है, जो सतत् परमात्मा के अनुसन्धान में रहता है, उसे देह छोड़ने के बाद पुनर्जन्म नहीं लेना पड़ता।

4.10

वीतरागभयक्रोधा, मन्मया मामुपाश्रिताः।
बहवो ज्ञानतपसा, पूता मद्भावमागताः॥10॥

राग, भय और क्रोध से सर्वथा रहित, मुझ में तल्लीन, मेरे (ही) आश्रित (तथा) ज्ञान रूप तप से पवित्र हुए बहुत से (भक्त) मेरे स्वरूप को प्राप्त हो चुके हैं।

विवेचन:- आसक्ति, भय और क्रोध से जो मुक्त हो गए तथा सतत् परमात्मा के अनुसन्धान में हैं, अनन्य प्रेम से जिन्होंने परमात्मा को अपना मन अर्पण किया है, ऐसे बहुत से परमात्मा पर आश्रित भक्तों ने मुझे पा लिया है। वह देह में रहते हुए ज्ञान से पवित्र होकर मुझे ही प्राप्त कर लेते हैं।

किसी वस्तु के लिए आसक्ति होती है और वह नहीं मिलती तब क्रोध उत्पन्न होता है। आसक्ति न हो तब भय भी चला जाता है। ऐसा हम अनेक सन्त महात्माओं के जीवन को देखते हैं जिनके जीवन से क्रोध चला गया।

सन्त एकनाथ महाराज को क्रोधित करने के लिए शर्ते लगी थीं-

कभी जूते पहनकर कोई उनके मन्दिर में चला गया। कभी उनकी पत्नी की पीठ पर खाना परोसते समय बैठ गए। तब एकनाथ महाराज कहते, देखना मेरा बेटा तुम्हारी पीठ पर बैठा है गिरने न पाए। पत्नी गिरिजा भी कहती, जैसे मैं हरि को गोदी में बैठाती हूँ, वैसे ही पीठ पर बैठाऊँगी। कभी क्रोध नहीं किया। ऐसा पवित्र जिनका जीवन है, वे देह में रहते हुए भी परमात्मा को प्राप्त कर लेते हैं।

जैसा चिन्तन वैसा मन, परमात्मा को मन देना इसका क्या अर्थ है?

एक कहानी से हम समझते हैं।

भृङ्गी कीटक अन्य दूसरे कीटक को पकड़ता है और जोर से काटता है तथा मिट्टी में दबा देता है। अब उसका बाहर जाने का रास्ता बन्द हो जाता है। भृङ्गी कीटक चला जाता है परन्तु अन्दर का कीटक उसी का चिन्तन करता रहता है, कैसे आया, कैसे गया यही सोचता रहता है। कुछ देर बाद जब भृङ्गी कीटक लौट कर आता है तब तक अन्दर कीटक नया भृङ्गी बन जाता है।

जिसका चिन्तन करते हैं उसी प्रकार मन होने लगता है और मनुष्य का जीवन भी उसी प्रकार होने लगता है। जो परमात्मा का चिन्तन करते हैं, वे परमात्मा को ही प्राप्त करते हैं ।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

जे मद्भावा झाले ते मीच होऊन गेले।

वह मनुष्य के रूप में दिखते हुए भी परमात्मा से एक रूप होते हैं।

आजी झाला सत्संग तुका झाला पांडुरंग।

सत्सङ्ग करते-करते सन्त तुकाराम स्वयं विट्ठल से एकाकार हो जाते हैं।

कैसे नित्य परमात्मा का अनुसन्धान करना, कैसे उनका नित्य भजन करना, कैसे परमात्म-तत्त्व को प्राप्त करना, यह भगवान आगे के श्लोकों में बताते हैं। कर्म, विकर्म और अकर्म का सिद्धान्त भगवान आगे बताते हैं।

गङ्गाजी के पावन तट पर गुरुदेव के मुखारविन्द से जो ज्ञान धारा प्रतिवर्ष प्रवाहित होती है उसी के कुछ कण बटोर कर साधकों के साथ साझा किए गए। यह विवेचन सत्र ज्ञानेश्वर महाराज के चरणों में अर्पण किया गया। आज का विवेचन सत्र समाप्त हुआ।

प्रश्नोत्तर:-
प्रश्नकर्ता:- सपना दीदी
प्रश्न:- अधर्म को मूक बन कर जो निहारे जाते हैं।
भीष्म हो, द्रोण हो, या कर्ण हों सब मारे जाते हैं।।
भगवान पितामह भीष्म का हृदय परिवर्तन क्यों नहीं कर पाये, जब कि वे श्रीकृष्ण के पूर्ण समर्पित भक्त थे?
उत्तर:- अर्जुन ने श्रीभगवान को वचन दिया था कि आप जैसा कहेंगे मैं वैसा ही करूँगा, किन्तु भीष्म ने ऐसा समर्पण नहीं किया था। पितामह भीष्म ने माता सत्यवती को वचन दिया था कि मैं विवाह नहीं करूँगा एवं जब तक जीवित रहूँगा राजगद्दी पर नहीं बैठूँगा किन्तु राज दण्ड का त्याग नहीं करूँगा। पितामह अपनी प्रतिज्ञा से बँधे हुए थे। भगवान ने कहा कि हमें अपनी प्रतिज्ञा विषम परिस्थितयों में तोड़नी पड़ती है। युद्धक्षेत्र में शस्त्र न उठाने की प्रतिज्ञा करने वाले श्रीकृष्ण भी भीष्म पितामह के पीछे सुदर्शन चक्र लेकर दौड़े, किन्तु पितामह अन्त तक आबद्ध रहे, अत: भगवान कुछ भी नहीं कर सके।

प्रश्नकर्ता: जेठा खुराना भैया
प्रश्न:- भगवान निराकार हैं, जब उनके पास भक्त जाते हैं तो निराकार को ही देखते हैं, तब उनको आनन्द कैसे मिलता है? जबकि भगवान कहते हैं कि साकार रूप की पूजा करो। फिर वे निराकार रूप में कैसे भक्त को मिलते हैं?
उत्तर:- भगवान भक्त की भावना के अनुसार साकार या निराकार होते हैं। जलाशय में जिस प्रकार बर्फ होती है उसी प्रकार भगवान निराकार रूप में आते हैं, किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि भगवान साकार रूप में नहीं हैं। चित्त को कुछ आकार चाहिये इसीलिए भगवान ने कहा कि तुम सगुण रूप की आराधाना करो। भगवान भक्त को लीलायें दिखाने के लिये साकार रूप में प्रकट होते हैं।

प्रश्नकर्ता:- माधवी चावला दीदी
प्रश्न:- ग्रहण काल में गीता पाठ करना चाहिये कि नहीं? गीता जी पठन-पाठन है या मन्त्र जाप?
उत्तर:- गीता जी दोनों ही हैं, इनका पाठ चन्द्र ग्रहण में भी किया जा सकता है। गीता जी का पठन-पाठन मृत्यु के बाद सूतक में भी किया जा सकता है, यह पावन करने वाली धारा है, यह शुद्ध करने वाली है।

प्रश्न:- गीता जी का रात में पठन किया जा सकता है क्या?
उत्तर:- हाँ गीता जी को रात में पढ़ने में कोई दोष नहीं है। गीता जी का एक-एक अक्षर मन्त्र प्रतिपाद्य है, यह मोह रूपी महिषासुर का समूल नाश करती है।

प्रश्नकर्ता:- कीर्ति दीक्षित दीदी
प्रश्न:- हमारी उत्पत्ति कब हुई?
उत्तर:- मेरा शास्त्र का अध्ययन उतना नहीं है। संसार का सञ्चालन ब्रह्मा, विष्णु, महेश द्वारा किया जाता है। निर्माण, पालन,

एवम् संहार क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु, महेश करते हैं। मनुष्य का निर्माण मर्कट (वानर) से नहीं हुआ है। परमात्मा ने मानव योनि को अलग ही उत्पन्न किया है, यही एकमात्र योग योनि है। शेष चौरासी लाख योनियाँ भोग योनियाँ हैं।

प्रश्नकर्ता:- रामकुमार भैया
प्रश्न:- हम जो परमात्मा से भिन्न-भिन्न प्रार्थना करते हैं, वह माँगना सही है कि नहीं? यह सकाम है या निष्काम?
उत्तर:- हाँ! प्रार्थना कर के भगवान से माँगने में कुछ गलत नहीं है। यह सकाम है, अभी हम निष्काम तक नहीं पहुँचे हैं। कुछ प्राप्ति के बाद ईश्वर में आस्था दृढ़ होती है और धीरे-धीरे निष्काम में बदल जाती है। याचना बार-बार नहीं करना चाहिए। जिस प्रकार बच्चा खिलौनों से थक कर माँ के पास भागता है उसी प्रकार भक्त को भी ईश्वर से ईश्वर को ही माँगना चाहिए। कुछ भी माँगना गलत नहीं है।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||